राजस्थानी नीतिकाव्य में प्रयुक्त शैलियाँ : एक विवेचन

[1]सुधा शर्मा
[1]शोधार्थी
[1]हिन्दी विभाग
[1]ज. रा. ना. राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड) विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.), भारत

सारांश : राजस्थानी नीतिकाव्य के सृजन में नीतिकार कवियों का ध्येय अध्येताओं को विविध विषयक नीति तत्त्वों का सन्देश प्रदान कर, उचित–अनुचित का ज्ञान कराना रहा है। इस उद्देश्य हेतु राजस्थानी कवियों ने अपनी नीतिपरक रचनाओं में विविध शैलियों का प्रयोग कर उन्हें कलात्मक सौन्दर्य, सशक्त अभिव्यक्ति तथा सहज संप्रेषणीयता प्रदान की है। इसी कारण उनकी सहज ग्राह्य कालजयी रचनाएँ जन–जन का कण्ठहार बन गई हैं तथा व्यक्ति और समाज का जीवन पथ में उत्कृष्ट नैतिक मार्गदर्शन कर रही हैं। इन नीतिपरक रचनाओं की लोकप्रियता एवं सफलता से प्रेरित इस शोध पत्र में राजस्थानी नीतिकाव्य में प्रयुक्त विविध शैलियों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है, जो एक नवीन प्रयास है।

मूलशब्द **– नीति, नीतिकाव्य, राजस्थानी, शैली**

1. प्रस्तावना – 'नीति' मनुष्य जीवन में कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य अर्थात् करणीय एवं अकरणीय आचरण का निर्धारण करती है। राजस्थान नीतिपरक आचरण का उत्कृष्ट उदाहरण रहा है। यहाँ की संस्कृति में नीतियुक्त आचरण को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। राजस्थानी नीतिकाव्य के सृजन में नीतिकार कवियों का ध्येय अध्येताओं को विविध विषयक नीति तत्त्वों का सन्देश प्रदान कर, उचित–अनुचित का ज्ञान कराना रहा है। इस कार्य हेतु शैली का स्पष्ट, सरल एवं प्रभावशाली होना आवश्यक है।

साहित्य में कथ्य आन्तरिक तत्त्व है तथा शैली बाह्य तत्त्व। किसी भी कृति के लिए उक्त दोनों तत्त्वों की संपुष्टता अनिवार्य है। उपयुक्त शैली के प्रयोग से रचना में कलात्मक सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है, अभिव्यक्ति में सशक्तता तथा सम्प्रेषणीयता में सहजता आती है।

राजस्थानी नीतिकाव्य के सृजन में विविध शैलियों के कुशल प्रयोग ने इन रचनाओं को विशिष्टता प्रदान की है। इन नीतिपरक रचनाओं की लोकप्रियता एवं सफलता से प्रेरित इस शोध पत्र में राजस्थानी नीतिकाव्य में प्रयुक्त विविध शैलियों का सोदाहरण विवेचन प्रस्तुत किया गया है, जो एक नवीन प्रयास है।

2. राजस्थानी नीतिकाव्य में प्रयुक्त शैलियाँ – राजस्थानी नीति कवियों ने अपनी नीतिपरक रचनाओं में कलात्मक सौप्दर्य की सृष्टि करने तथा सशक्त अभिव्यक्ति एवं सहज सम्प्रेषणीयता के समावेश हेतु जिन विविध शैलियों का सुष्ठु प्रयोग किया है, उनका विवरण निम्नानुसार है –

(अ) उपदेशात्मक शैली – उपदेशात्मक शैली का अभिप्राय है – सीधी एवं स्पष्ट भाषा में उपदेश देना। काव्य की यह नीरस शैली मानी जाती है। इसमें कवि व्यक्ति अथवा समूह से उपदेश के स्वर में नीति की बात कहता है। राजस्थानी के मुक्तक काव्यों में तथा सन्त कवियों की बत्तीसी, छत्तीसी, बावनी आदि नीतिपरक रचनाओं में इस शैली का बहुलता से प्रयोग दृष्टिगत होता है। इस शैली के कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं –

मुख ऊपर मिठियास, घट मांही खोटा घड़ै।
इसड़ां सूं इकळास, राखीजे नह राजिया।।[1]
बैरी पूछै बात, हित री कहणी हक्क है।
हार जीत हरि हात, चाल न करणी चकरिया।।[2]
सुपिनै सब कुछ देखिये, जागै तो कुछ नांहिं।
अैसा यहु संसार है, समझि देखि मन मांहिं।।[3]

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि उपदेशात्मक शैली में कवि व्यक्ति या समूह से सीधे उपदेश के स्वर में कहता है, जैसे 'राखीजे नह', 'न करणी', 'समझि देखि' आदि। इसके रचयिता कवि उपदेशक या सुधारक जैसे प्रतीत होते हैं।

(ब) सूक्त्यात्मक शैली – 'सूक्ति' का सामान्य अर्थ है सौष्ठवपूर्ण कथन। भावपूर्ण अथवा चमत्कारपूर्ण उक्ति सूक्ति कहलाती है। राजस्थानी नीतिकाव्य की यह बहुप्रयुक्त शैली है। उक्त शैली की प्रथम विशेषता है – बात उपदेशात्मक शैली की भाँति सीधे नहीं कही जाती, अपितु किसी उदाहरण द्वारा अप्रस्तुत का समर्थन किया जाता है। यथा –

उदैराज! उद्दम कियां, सब–कुछ होवै त्यार।
गाय–भैंस कुळ में नहीं, दूध पिवै मंजार।।[4]

सूक्त्यात्मक शैली की दूसरी विशेषता है – कथन विधि का सौन्दर्य। इसमें किसी शब्दालंकार के सहारे अथवा किसी एक शब्द की पुनरावृत्ति कर प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। यह आवृत्ति संज्ञा, क्रिया, अव्यय अथवा विशेषण पदों की हो सकती है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं –

संज्ञा पद आवृत्ति –

मन नाचै ज्यूं मोर, मन–मोजी मन मचलणो।
मन में बसत्यो चोर, मन बस कुण रै, मोलका।।[5]

क्रिया पद आवृत्ति –

डाढ़ खटक्कै काकरौ, रजी खटक्कै नैण।
रयौ खटक्कै बावळौ, गयौ खटक्कै सैण।।[6]

अव्यव पद आवृत्ति –

गुण बिन ठाकर ठीकरौ, गुण बिन मीत गंवार।
गुण बिन चंदण लाकड़ी, गुण बिन नार कुनार।।[7]

सार, कारणमाला तथा एकावली आदि श्रृंखला मूलक अलंकारों के प्रयोग से भी राजस्थानी नीतिकाव्य में सुन्दर सूक्तियाँ कही गई हैं –

सार –

खाणै सूं कपड़ौ भलौ, कपड़ै सूं गैणौह।
गैणै सूं जागा भली, जागा सूं दैणौह।।[8]

उपर्युक्त उदाहरण में वस्तुओं के उत्तरोत्तर उत्कर्ष का वर्णन किया गया है अर्थात् एक के बाद दूसरे को अधिक अच्छा दिखलाया गया है।

एकावली –

जुगमें मिलणा अजब है, मिल विछड़ो लत कोय।
विछड़्याँ मिलणा दुलभ है, राम करै जद होय।।[9]

उपर्युक्त उदाहरण में मिलने, बिछुड़ने तथा पुनः मिलने की एक माला सी बनाकर चमत्कार और आकर्षण उत्पन्न किया गया है।

कारणमाला –

धरम घटायाँ धन घटै, धन घट मन घट जाय।
मन घटियाँ महमा घटै, घटत–घटत घट जाय।।[10]

उपर्युक्त उदाहरण में कारणों की माला प्रदर्शित की गई है। कारण उत्तरोत्तर क्रम से परस्पर जोड़े गए हैं, जो पूर्वकथित पदार्थों में कारण रूप में वर्णित हैं। इस प्रकार कारणों की एक शृंखला सी बन गई है, जिससे उक्ति में आकर्षण उत्पन्न हुआ है।

सूक्त्यात्मक शैली के प्रयोग में कहीं–कहीं कवि द्वारा एक ही पद की आवृत्ति कर कथन को आकर्षक और चमत्कारपूर्ण बनाया जाता है। यथा –

तिणको–तिणको तोड़, झप रुळ ज्यासी झूंपड़ो।
मिणको–मिणको जोड़, बणज्या माळा, बावळा।।[11]

यहाँ 'तिणको–तिणको' और 'मिणको–मिणको' में आवृत्ति के द्वारा कथन को प्रभावपूर्ण बनाया गया है।

इस प्रकार राजस्थानी नीतिकाव्य में सूक्त्यात्मक शैली का सुष्ठु प्रयोग हुआ है।

(स) अन्योक्ति शैली – राजस्थानी नीतिकाव्य की यह सबसे सुन्दर और शिष्ट शैली है। अन्योक्ति में प्रस्तुत का कथन न करके उससे मिलते–जुलते अप्रस्तुत का कथन किया जाता है। राजस्थानी नीति कवियों ने पशु, पक्षी, वृक्ष, समुद्र, बादल आदि के माध्यम से, अप्रत्यक्ष रूप से नीति निर्देशन किया है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं –

दूध नीर मिळ दोय, हेक जिसी आक्रित हुवै।
करै न न्यारौ कोय, राजहंस बिन राजिया।।[12]

यहाँ कवि ने 'राजहंस' के माध्यम से नीर–क्षीर विवेकी पुरुषों की प्रवृत्ति की ओर संकेत किया है।

फूलि फलै पर हेत, संत आम को रूंखड़ो।
जो पत्थर की देत, मीठो फल दे शेखरा।।[13]

इस अन्योक्ति में, 'आम' के वृक्ष के माध्यम से सज्जनों की परोपकारी वृत्ति को प्रकट किया गया है।

तन उजळा, मन साँवळा वुगला कपटी भेख।
इणसें तो कागा भला, बाहर–भीतर अेक।।[14]

उपर्युक्त उद्धरण में, 'बगुले' के माध्यम से कपटपूर्ण आचरण करने वाले मनुष्यों के स्वरूप का चित्रण किया गया है।

भूख दूख संकट सहै, सहै विड़ाणा भार।
हरीदास, मौनी बळद कासूँ करै पुकार?।।[15]

इस अन्योक्ति में, 'बळद' (बैल) के माध्यम से सेवक की मौन व्यथा को चित्रित किया गया है।

इस प्रकार राजस्थानी नीति कवियों ने इस शैली का बहुलता से प्रयोग किया है। उक्त शैली के माध्यम से, प्रत्यक्ष रूप से कुछ कहे बिना ही, अप्रत्यक्ष रूप से नीति निर्देशन में, कवियों ने अपनी कुशलता का परिचय दिया है।

(द) व्यक्ति सम्बोधन शैली – राजस्थानी नीतिकाव्य की एक प्रमुख शैलीगत विशेषता 'व्यक्ति सम्बोधन' है। यह सम्बोधन नीति छन्दों के चारों चरणों में न्यूनाधिकता के साथ उपलब्ध होता है। विशेषतः चतुर्थ चरणान्त में प्रयुक्त व्यक्ति सम्बोधन तो इस नीतिकाव्य की विशिष्ट पहिचान रही है।

डॉ. भगवतीलाल शर्मा के अनुसार – *''आत्मानुभूति की गहनता लाने, पाठक या वाचक से प्रत्यक्ष तादात्म्य का अनुभव कराने, प्रिय पात्र को स्वयं से अधिक महत्त्व प्रदान कर अति गहरे त्याग–भाव को दर्शाने – आदि इस चतुर्थ चरणान्त सम्बोधन–शैली के मनोवैज्ञानिक आधार रहे हैं। इसी कारण इनमें तीव्र संवेदना का संचरण हुआ और ये सोरठे व्यक्तिगत होकर भी समष्टिगत संपदा बन गये।''*[16]

राजस्थानी नीतिकाव्य में सोरठिया दोहों के विभिन्न चरणों में प्राप्त व्यक्ति सम्बोधन के कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं –

प्रथम चरण में –

भैरव! होत उदास मन, नहिं कोई गुण को जाण।
पंडित नै आदर नहीं, मूरख नै बहु मान।।[17]

द्वितीय चरण में –

ओछै को संग साथ, अहमद तजौ अंगार ज्यूं।
तातो जारे हाथ, सीरो कर कारो करै।।[18]

तृतीय चरण में –

साचौ भाव सिभारथी, जो राखे निज जीव।
उण रै घर निसचै 'उदय', संपत रहै सदीव।।[19]

चतुर्थ चरण में –

कारण गुण नंह कोय, औगुण ही भरियो अनंत।
हिक संपति घरि होय, नमै सकल जग, नाथिया।।[20]

इस चतुर्थ चरणान्त सम्बोधन शैली का प्रभावी प्रयोग अधिकांश नीतिपरक सोरठों में हुआ है। ऐसे सोरठों में अनूठे प्रतीकों से जहाँ भावात्मक गहराई उजागर हुई है, वहीं अभिव्यक्ति की लाक्षणिकता, व्यंजनात्मकता एवं विविधता हृदय को रसामृत से सिक्त कर देती हैं।

एक से अधिक चरणों में –

मंगळ वाणी बोळ, मंगळ होसी मिनख रो।
मंगळाअी दे खोल, मंगळ जीवण लेय अर।।[21]

इस प्रकार स्पष्ट है कि राजस्थानी नीतिकाव्य में व्यक्ति सम्बोधनपरक शैली का बहुलता से प्रयोग हुआ है।

(क) हास्यव्यंग्यात्मक शैली – राजस्थानी नीतिकाव्य में हास्यव्यंग्यात्मक शैली का भी नीतिकथन में प्रयोग हुआ है। कविराज बाँकीदास के कृपणदर्पण, चुगलमुखचपेटिका, कायरबावनी, कृपण पच्चीसी, वैसकवार्ता तथा कवि ऊमरदान के सन्त–असन्तसार, तमाखू की ताड़ना, विभचार री बुराई, कलदार री करामात, सूमसतक आदि रचनाओं में इस शैली का व्यापक उपयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त अनेक कवियों की स्फुट रचनाओं में भी यत्र–तत्र हास्यव्यंग्यात्मक शैली का उपयोग दृष्टिगत होता है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं –

बड़ीं अचंभो हे सखी, वोटां रै मैदान।
धाया मांगै भीख अर, भूखा देवै दान।।[22]

हे सखी! कितने आश्चर्य की बात है कि वोटों के खेल में, सम्पन्न व्यक्ति तो भीख (वोट की) माँगता है और भूखा व्यक्ति दान (वोट का) देता है।

लो' घड़ता ज लुहार, मन सु भई दे–दे भणै।
सूमां रै उर सार, रहै घणा दिन, राजिया!।।[23]

लुहार लोहे की वस्तुओं के निर्माण में, लोहे को पीटते समय 'दे–दे' की ध्वनि करता है। कृपण इसका अर्थ 'दान कर दे' ग्रहण करता है और यह ध्वनि सार की भाँति छेदती हुई बहुत समय तक उसके हृदय को पीड़ा पहुँचाती है।

मतलब री मनवार, चुपकै लावै चूरमो।
बिन मतलब मनवार, राब न पावै, राजिया!।।[24]

संसार के लोग प्रायः ऐसे स्वार्थी होते हैं कि जब स्वार्थ साधना होता है, तब मनुहार कर–कर के चुपके–चुपके अच्छे से अच्छे पकवान लाकर खिलाते हैं, परन्तु जब स्वार्थ नहीं होता है, तब मनुहार करने पर भी राबड़ी तक नहीं पिलाते।

वीरता के लिए राजस्थान की धरा विश्वविख्यात है। इसके अभाव में पुरुष की पत्नी भी हास्यव्यंग्यात्मक उपहास करने से नहीं चूकती। यह जनजीवन में वीरता के स्थापित नीतिगत महत्त्व को प्रदर्शित करता है –

मैं परणंती परखियो, लाँबो घणो लड़ाक।
आलेड़ीकी भींत ज्यूँ पड़ै दड़ाक–दड़ाक।।[25]

इस प्रकार राजस्थानी नीतिकाव्य में हास्यव्यंग्यात्मक शैली का यत्र–तत्र सुन्दर प्रयोग हुआ है, जो इस काव्य की विविधता और विशालता को प्रदर्शित करता है।

(ख) प्रश्न तथा प्रश्नोत्तर शैली – कतिपय कवियों ने अपने छन्दों में कुछ प्रश्न रख दिए हैं, जिनकी ध्वनि से उत्तर निकलता है और उनमें नीति की बातें निहित रहती हैं –

क्या पाणीका बुदबुदा, क्या बाळूकी भीत?
क्या ओछैका आसरा, क्या दुरजणकी प्रीत?[26]

यहाँ चार प्रश्न मात्र हैं, परन्तु इनसे ध्वनि निकलती है कि पानी का बुदबुदा, बालू की भीत, ओछे मनुष्य का आश्रय और दुर्जन की प्रीत क्षणिक और अस्थिर होती है।

इसी के समान सूक्ति कथन की एक अन्य शैली है जिसमें छन्द की प्रथम पंक्ति में प्रश्न और दूसरी पंक्ति में उत्तर रहता है –

जळ न डुबोवत काठकूँ, कहो काहेकी प्रीत?।
अपणा सींच्या जाणकर, यही वड़ाँकी रीत।।[27]

इस शैली का एक रूप और मिलता है, जिसमें एक छन्द में प्रश्न और दूसरे छन्द में उत्तर रहता है। सूक्ति–कथन की यह शैली भी बड़ी सुन्दर है, यद्यपि राजस्थानी नीतिकाव्य में इसका प्रयोग यत्र–तत्र ही हुआ है। एक उदाहरण दृष्टव्य है।

कृपण के घर ही लक्ष्मी क्यों संचित रहती है ? प्रश्नोत्तर के माध्यम से इस बात को स्पष्ट किया गया है –

ऊमां पूछै लिच्छमी, सूमां घर क्यूं जाय।
दाता पंडित सूरमा, क्यूं नह आवै दाय।।
पंडित घर मम सौक है, दाता है परहत्थ।
सूरां घर रंडापणौ, तिण सूं सूमां सत्थ।।[28]

इस प्रकार प्रश्न एवं प्रश्नोत्तर शैली का यत्र–तत्र सुन्दर प्रयोग हुआ है।

(ग) अन्य शैलीगत प्रयोग – राजस्थानी नीतिकाव्य में विविध शैलियों के प्रयोग में उपादेय वस्तुओं की गणना की प्रवृत्ति भी लक्षित होती है। समान गुण धर्म वाली विविध वस्तुओं को एक साथ रखकर नीति की कोई बात कही जाती है। उदाहरणार्थ –

कटक गिलोय, किरायतो, सज्जन वयण करूर।
कडवा देख न छोडियै, अै गुण करै जरूर।।[29]

कहीं–कहीं संख्यानुसारी नियमों की प्रवृत्ति भी दृष्टिगत होती है। विदुर नीति, चाणक्य नीति, पालि के अंगुत्तर निकाय तथा जैन–स्थानांग जैसे ग्रंथों में यह शैली पूर्ण रूप से विकसित दृष्टिगत होती है तथा उन्हीं के प्रभाव स्वरूप राजस्थानी नीतिकाव्य में भी यत्र–तत्र इस शैली के स्वरूप के दर्शन होते हैं –

चंदन सज्जन चंद जो, तीनां अेक सुवास।
उण घसियां उण बोलियां, उण उघड़्या उजास।।[30]
आधि–व्याधि, अपमान अर, पर घर भोजनवास।
कन्या वृद्धति संतति, पांचो ही प्राण विनास।।[31]

कतिपय स्थलों पर प्रत्येक चरण में एक बात को भला कहकर इसके माध्यम से किसी नीतिवचन को परोक्ष रूप से इंगित किया गया है। यथा –

माया तो माड़ी भली, सींच्या भला निवांण।
घोड़ा तो फेरया भला, खैंची भली कबांण।।[32]

अर्थात् धन का उपयोग कर लेना ही भला है, जलाशयों से पानी सींचा हुआ भला है, घोड़ा फेरा हुआ तथा कमान खींचा हुआ ही भला है। यहाँ परोक्ष रूप से यह नीतिवचन इंगित किया गया है कि उपयोगी वस्तुओं का उपयोग करना ही सार्थक है तथा उपयोग न करने से उनका होना निरर्थक है।

इस प्रकार आलोच्य नीतिकाव्य में विविध शैलीगत प्रयोग दृष्टिगत होते हैं।

3. निष्कर्ष – राजस्थानी नीतिकाव्य के शैलीगत विवेचन से यह तथ्य उजागर होता है कि राजस्थानी कवियों ने अपनी नीतिपरक रचनाओं में विविध शैलियों का प्रयोग कर उन्हें कलात्मक सौन्दर्य, सशक्त अभिव्यक्ति तथा सहज सम्प्रेषणीयता प्रदान की है। उन्होंने प्रमुखतः उपदेशात्मक, सूक्त्यात्मक, अन्योक्ति, व्यक्ति सम्बोधन तथा हास्यव्यंग्यात्मक शैलियों का सुष्ठु प्रयोग किया है। व्यक्ति सम्बोधन शैली राजस्थानी नीतिकाव्य की विशिष्ट पहिचान रही है तथा इस शैली का बहुलता से प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त प्रश्न, प्रश्नोत्तर तथा अन्य शैलियों का भी यत्र–तत्र सन्दर्भानुसार उपयोग किया गया है। उन्होंने कतिपय नवीन प्रयोग भी किए हैं।

विविध शैलियों के कुशल प्रयोग से उनकी रचनाएँ सहज ग्राह्य बनी हैं। अपनी लोकप्रियता के कारण ये कालजयी रचनाएँ जन–जन का कण्ठहार बन गई हैं तथा जीवन पथ में व्यक्ति और समाज का उत्कृष्ट नैतिक मार्गदर्शन कर रही हैं।

सन्दर्भ :

1. कविया, शक्तिदान, 2011, 'राजिया रा सोरठा', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 26/7।
2. राठौड़, विक्रमसिंह, 1993, 'चकरिया रा सोरठा', राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर, पृ. 31/110।
3. स्वामी, मंगलदास, 1951, माया को अंग, श्रीदादूदयालजी की वाणी, (प्रकाशक) वैद्य जयरामदास स्वामी भिषगाचार्य, जयपुर, पृ. 220/10।
4. राजस्थानी गंगा, 1986, खंड 2, भाग 4, अक्टूबर–दिसम्बर 1986, पृ. 21/285।
5. शर्मा, उदयवीर, 2002, 'मोलकै रा सोरठा', वरदा, वर्ष 45, अंक 2–3 संयुक्त, अप्रैल–सितम्बर 2002, पृ. 49/41।
6. कविया, शक्तिदान, 2000, 'राजस्थानी दूहा संग्रह', साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, पृ. 66/24।
7. वही, पृ. 64/6।
8. वही, पृ. 77/129।
9. स्वामी, नरोत्तमदास, 1961, 'राजस्थान रा दूहा', सादूळ राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, पृ. 35/2।

10. वही, पृ. 37/10।
11. ताऊ शेखावाटी, 1999, 'सोरठां री सौरम (बावळा रा सोरठा)', रचना प्रकाशन, जयपुर, पृ. 42/55।
12. कविया, शक्तिदान, 2011, 'राजिया रा सोरठा', पूर्वोद्धृत, पृ. 32/51।
13. व्यास, चन्द्रशेखर, वि. सं. 2014, 'शेखर का सोरठा', (प्रकाशक) गोविन्द अग्रवाल, चूरू, पृ. 24/104।
14. स्वामी, नरोत्तमदास, 1961, 'राजस्थान रा दूहा', पूर्वोद्धृत, पृ. 34/15।
15. वही, पृ. 34/9।
16. शर्मा, भगवतीलाल, 1994, 'नीतिपरक सम्बोधन काव्य', राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर, पृ. 15।
17. राजस्थानी गंगा, 1986, खंड 2, भाग 4, अक्टूबर–दिसम्बर 1986, पृ. 25/354।
18. शर्मा, भगवतीलाल, 1994, 'नीतिपरक सम्बोधन काव्य', पूर्वोद्धृत, पृ. 16।
19. उज्ज्वल, मगराज, 2005, 'उदयराज उज्ज्वल ग्रंथावली', महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध–केन्द्र, जोधपुर, पृ. 368/12।
20. विश्नोई, कृष्णलाल, 1995, 'नाथिये रा सोरठा', विश्वम्भरा, वर्ष 27, अंक 1, जनवरी–मार्च 1995, पृ. 9/7।
21. 'मंगल', भौमराज भंबीरू, 1944, 'मूंघा मोती', (प्रकाशक) पी. आर. अग्रवाल, राजगढ़ (बीकानेर स्टेट), पृ. 81/34।
22. शर्मा, मनोहर, 1995, 'माणक–मोती', विश्वम्भरा, वर्ष 27, अंक 1, जनवरी–मार्च 1995, पृ. 22/16।
23. स्वामी, नरोत्तमदास, 2000, 'राजिया रा दूहा', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 25/130।
24. वही, पृ. 21/111।
25. स्वामी, नरोत्तमदास, 1961, 'राजस्थान रा दूहा', पूर्वोद्धृत, पृ. 125/47।
26. वही, पृ. 53/124।
27. वही, पृ. 132/25।
28. कविया, शक्तिदान, 2000, 'राजस्थानी दूहा संग्रह', पूर्वोद्धृत, पृ. 131/672–673।
29. पुरोहित, मोहनलाल, वि. सं. 2017, 'राजस्थानी नीति दूहा', सादूळ राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, पृ. 92/668।
30. चारण, चन्द्रदान राणीदान, 2015, 'नीति के राजस्थानी दोहे', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 337।
31. शर्मा, गिरधारीलाल, 1956, 'राजस्थानी दोहावली–भाग 1', साहित्य–संस्थान, राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर, पृ. 86/251।
32. चूण्डावत, रानी लक्ष्मीकुमारी, 1997, 'राजस्थान के प्रसिद्ध दोहे सोरठे', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 68/417।